# आधुनिक हिंदी साहित्य में समकालीन बोध

**डॉ. रज़िया शहेनाज़ शेख अब्दुल्ला**
सहयोगी प्राध्यापिका तथा शोध निर्देशिका
बहिर्जी स्मारक महाविद्यालय, बसमतनगर
दूरभाष : +91 8888662341, 9850602786
E-Mai l ID: drskraziya@gmai l.com

**शोध सारांश**

समकालीन का अर्थ है जो एक समय में हो । विशेषण के रूप में समन्कालीन शब्द एक विशेष्य की माँग करता है और यह विशेष्य राजनीति, धर्म, साहित्य, समाज कुछ भी हो सकता है । जब हम कहते हैं, कि कबीर और तुलसी समकालीन साहित्यकार है, तो काल दोनों के लिए एक समान काम उपलब्ध कराता है और यह समान भूमि दोनों साहित्यकारों का एक आधार बनता है ।

हिंदी साहित्य में आठवे दशक की कविता को समकालीन कविता कहा गया है । मगर साहित्य को पंचवर्षीय घेरो में नहीं बांधा जा सकता । समकालीन साहित्य का अर्थ समसामायिकता नही होता 'समकालीनता' एक व्यापक और बहुआयामी शब्द है और आधुनिकता का आधार तत्व है, जो समकालीन है वह आधुनिक भी हो यह आवश्य नहीं, किंतु आधुनिक चेतना से मिश्रित दृष्टि है, वह निश्चित रूप से समकालीन भी हो सकती है । कहने का तात्पर्य यह है कि समकालीन साहित्य ने बदलते हुए जीवनमूल्यों को मानवीय स्तरों पर ही प्रतिष्ठित किया है। अर्थात समकालीन साहित्य का सामाजिक बोध अपने समय की माँग के अनुरूप उभरा है और उसने समय को अपने दायित्वों के प्रति जागरुक बनाया है । समकालीन साहित्य युगीन यथार्थ वास्तविकता को अभिव्यक्ति प्रदान करता है ।

**बीज शब्द–** हिंदी साहित्य, समकालीन, बोध, समाज, अभिव्यक्ति आदि ।

समकालीनता एक सम्पूर्ण चेतना है, जो सामयिक संदर्भों, दबावों के तहत विशिष्ट स्वरूप व संरचना धारण करती है । अपने समय की महत्वपूर्ण समस्याओं के साथ मुठभेड ही समकालीनता है । समकालीनता एक ऐसा विशिष्ट पद है जो सतत वर्तमान प्रक्रिया को अपने में समाहित किए रहता है । अपने समय का यथार्थबोध तथा समाज के प्रति लोक पक्षधरता और सचेत मानवीय चेतना ही समकालीनता का बोधक होती है । डॉ. सुखबीर सिंह समकालीनता का अर्थ 'कविता और विविध आंदोलन' में स्पष्ट करते हुए लिखते हैं– "समकालीनता का अर्थ समसामायिकता नही होता है । तात्कालिकता से इसका अर्थ लेने से भी इसके अर्थ का बहुत संकोच हो जाता है । वस्तुतः समकालीनता एक व्यापक एवं बहुआयामी शब्द है और आधुनिकता का आधार तत्व है । जो समकालीन है, वह आधुनिक भी हो, यह आवश्यक नहीं है, किंतु जो आधुनिक चेतना से संचालित दृष्टि है, वह निश्चित रूप से समकालीन भी होती है । इसी संदर्भ में समकालीनता के अर्थ एवं तात्पर्य को थोड़ा व्यापक करके ही ग्रहण करना चाहिए ।"[1]

साहित्य में नयापन लाने का कार्य 15वी–16वीं शताब्दी में अंग्रेजी साहित्य में पहली बार हुआ । अंग्रेज साहित्यकारों ने प्राचीन सिद्धांतो को युगीन बताया, भाषा के विकास के लिए हर कोशिश की साथ में समीक्षकों ने भी शास्त्रीयता से हटकर व्यावहारिक समीक्षा की ओर झुले, प्लेटो को आदर्श बना दिया गया, साहित्य को प्रचार का साधन भी बना गया था । इन

साहित्यकारों ने मनुष्य के जीवन में संयत लाने के लिए तथा नैतिकता की वृध्दि के लिए साहित्य की स्वतंत्रता पर जोर दिया । लेखन में चितन होने लगा तथा साहित्यकारों को इतिहास, नीतिशास्त्र, दर्शन आदि का ज्ञान आवश्यक था । प्राचीन मान्यताओं को वहीं तक स्वीकारने लगे जहाँ तक वह स्वीकार्य हो । साहित्यकार को न्याय, विवेक और कल्याण का खजाना मानने लगे ।

सन 1960 के बाद भारतीय राजनीति में लोगों का मोहभंग शुरू हो गया । और कुछ घटनाओं ने जैसे 1962 का भारत–चीन युद्ध ने हिंदी चीनी भाई–भाई और नेहरू के पंचशील सिध्दांतों की धज्जियाँ उडा दी थी । इस घटना ने न सिर्फ बुध्दिजीवियों को परेशान व बेचैन किया बल्कि वैचारिक धरातल पर बदलाव भी दिखायी देने लगा था, जो बाद के दशकों में बडता ही गया । वस्तुओं को देखने, परखने, जाँचने की दृष्टि भी बदलती गयी जिस कारण साहित्य और समाज में भी परिवर्तित दृष्टि दिखाई दी जाने लगी । इसी दौर में आधुनिकता के भीतर ही समाज और साहित्य में एक नयी प्रवृत्ति पनप रही थी जिसकी पहचान आगे चलकर समकालीनता के रूप में की जाने लगी । जन आकांक्षाओं की बदली हुई प्रवृत्ति ने समकालीन साहित्य को प्रभावित किया। और तत्कालीन साहित्यकारों ने बदली हुई जन आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में की । आजादी के बाद सामंतवाद के सारे सामाजिक और वैचारिक विशेषों को समाप्त कर जिन लोकतांत्रिक संस्थाओं और मूल्यों के आधार पर जीवन की पुनर्रचना के स्वप्न देखे गये थे वे न सिर्फ अधूरे रह गये है बल्कि सभी संकट से घिर गए । इसी कारण, "हम समकालीनता के बोध को उस पुनर्रचना के संघर्ष से अलग करके नहीं देख सकते । यह बोध राष्ट्रीय जीवन के आधुनिकीकरण अर्थात सामंती, सामाजिक तथा वैचारिक अवशेषों को समाप्त कर जनवादी मूल्यों पर आधारित समाज और संस्कृति के संघर्ष का अभिन्न अंग है ।"[2]

सन् 1960 के पश्चात राष्ट्रीय स्तर पर हुए परिवर्तनों का प्रभाव हिंदी साहित्य पर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है । यह परिवर्तन पंचवर्षीय योजना के मूल्यांकन, पंचशील और भारत चीन युद्ध पाक–भारत युध्द के परिणाम स्वरूप तेजी से उभरता हुआ दिखाई देता है । इसके साथ ही विश्व के अन्य भागो में होने वाली सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक क्रांतियों का प्रभाव भी भारतीय मानस पर पड़ा है जो समकालीन कथा साहित्य में प्रतिबिंबित होता दिखाई देता है । मोहमंग की परिस्थितियों ने साहित्य की अन्य विधाओं के समान हिंदी उपन्यास और कहानी को भी गहरे स्तर पर प्रभावित किया है । इस प्रकार समकालीन हिंदी साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जीवन की विविध पक्षों की अभिव्यक्ति हुई है साथ ही 8 वें 9 वें दशक के बाद स्त्री अस्मिता, अधिकार के प्रश्न बड़ी तेजी से उठाए गए है जिसमें महिला व पुरुष दोनों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है । स्वाधीनता के बाद देश की जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियाँ उभरकर आयी है उसने समकालीन जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया । समकालीनता निर्धारण करते हुए राजेश जोशी लिखते हैं– "समकालीनता के पद का निर्धारण मुझे लगता है समय को विभाजित करने वाली ऐतिहासिक घटनाओं के संदर्भ में ही किया जाना चाहिए । लेकिन अक्सर अपनी सुविधा के अनुसार इस पद का उपयोग बहुत ही मनमाने ढंग से कर लिया जाता है, इस तरह अमूर्तन समकालीनता इस को एक अमूर्त पद बना देते हैं ।"[3]

अर्थात समकालीन कविता में विचार और संवेदना दोनों का महत्व स्वीकार किया गया है । समकालीन कविता आम आदमी के जीवन के संघर्षों, विसंगतियों, विषमताओं एवं विद्रुपता की खुली पहचान है । 'इक्कीसवीं सदी भारत की होगी' यह दिवा स्वप्न, को देखने वालों देश के उन अधनंगे भूखे लोगों की ओर ताकने का अवसर ही नहीं मिल पाता जो दो जून की रोटी के लिए मारे–मारे फिर रहे हैं । भारत के समग्र विकास के लिए आवश्यक है कि इस तबके को झाँका जाए । समकालीन हिंदी कविता मानवतावादी है, पर इसका मानवतावाद मिथ्या, आदर्श की परिकल्पनाओं पर आधारित नहीं है । उसमें यथार्थ की दृष्टि है जो मनुष्य के पूरे परिवेश को समझने का बौध्दिक प्रयास है । समकालीन कविता मनुष्य को किसी कल्पित सुंदरता और मूल्यों के आधार पर बड़ा करती है । केदारनाथ की कविता में हम इस महत्ता को देख सकते हैं–

"उसके बारे में कविता करना
हिमाकत की बात होगी
और वह मैं नहीं करूंगा
मैं सिर्फ आपको आमंत्रित करूंगा
आप आयें और मेरे साथ सीधे
उस आग तक चलें
उस चूल्हें तक जहाँ पक रही है,
एक अद्भूत ताप और गरिमा के साथ
समूची आग को गंध बदलती हुई
दुनिया की सबसे आश्चर्यजनक चीज
वह पक रही है।"[4]

समकालीन कविता वास्तव में व्यक्ति की पीड़ा की कविता है। अपने पूर्ववर्ती कविता की भाँति यह व्यक्ति के केवल आंतरिक तनाव और द्वंद्वों को नहीं उकेरता अपितु, यह व्यापक सामाजिक यथार्थ से जुड़ाव महसूस कराती है। जिंदगी को उन थपेडों को उसका ठोस सच्चाइयों को और राजनीतिक सरोकारों को भावुक हुए बिना सत्य का साक्षात्कार कराती है। प्रशासनिक तंत्र में भ्रष्टाचार का विष जनसामान्य को जीने नहीं दे रहा है। तब कवि माँ दुर्गा से कामना करता है–

"माँ दुर्गा
सादर पधारो,
बुराईयों के
राक्षसों को संहारों।
महँगाई पेट पर
पैर धर रही है,
भ्रष्ट्राचार की बहिन
टेढ़ी नज़र कर रही है।"[5]

भ्रष्टाचार समाज की वह कुरीति है जो समाज को अंदर से खोकला कर रही है। भ्रष्टाचार का जन्म कलुषित राजनीति– के कोख से हुआ है–

"झूठ ढला है
सिक्कों की राजनीति
टकसाल है पूरी संसद
चोरों और लुटेरों की चडपाल है।"[6]

आज की व्यवस्था, इस प्रकार है कि भ्रष्टाचार कहाँ नहीं है, आज हर नेता अपने को बचाने के लिए दल बदल रहा है। हम देखते हैं समकालीन कविता में समाज में व्याप्त तमाम मुद्दों को एवं उसके कुप्रभाव से समकालीन कविता हमे आला अवगत कराती है।

हिंदी के वरिष्ठतम पीढ़ी के आलोचक प्रो. विजयमोहन सिंह का मानना है कि, "जब भी मैं साहित्य के संदर्भ में समकालीनता के विषय में सोंचता हूँ, तो हमेशा लगता है कि जिसे हम समकालीन प्रश्नों, समस्याओं और दबावों के बीच ही हुआ होगा। शायद यही आधुनिक क्या साहित्य प्राचीन महाकाव्यों और पौराणिक कथाओं से अलग हो जाता है। मिथक और यथार्थ के बीच यह दूरी ही समकालीनता की अवधारणा को जन्म देती है किंतु समकालीनता का बोध और उसकी चेतना हमें अपने समय के प्रति अत्याधिक सजग और सचेत बना देती है... जब हम रचना के संदर्भ में समकालीनता की बात करते हैं तो हम पाते है कि हम तनी हुई रस्सी पर चल रहे हैं।"[7]

स्वतंत्रता ने संविधान प्रदत्त अधिकार अवश्य सौंपे, पर उसे जीने और उपयोग की मानसिकता स्वतंत्रता के लगभग 20–25 वर्ष बाद उभरी। यही वह समय था जब शिक्षा, रोजगार, राजनितिक संपत्ति विषयक अधिकारों का उपभोग करने का अवसर स्त्री को मिला। शिक्षा एवं रोजगार ने स्त्री की स्थिति में बदलाव लाया। इस तरह वह अध्ययन के केंद्र में आयी और इसके द्वारा उठाए गए प्रश्नों पर नवीनता से विचार किया जाने लगा। इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक को केंद्र में रखकर हम 'स्त्री प्रश्नो' से साक्षात करना चाहेंगे तो पाएँगे कि इक्कसवीं सदी के प्रथम दशक 2001–2012 में सामाजिक परिवर्तन, की गति सर्वाधिक तीव्र रही है। बाजारवाद व भूमंडलीकरण ने अपनी तमाम अच्छाइयों और बुराइयों के साथ सभी वर्ग की स्त्रियों को घर से बाहर निकलने के अवसर प्रदान किये। स्त्री ने अपने लिए जहाँ अब–तक के वर्जित क्षेत्रों में अपनी ठोस उपस्थिति दर्ज करायी, वही आर्थिक स्वावलंबन की दिशा में तीव्र प्रयास करती दिखायी देने लगी और उसका परिणाम आज समाज के सामने दिखाई दे रहा है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**

1) डॉ. सुखबीर सिंह – कविता और विविध आंदोलन–लेख
2) डॉ. रामकली सराफ – समकालीन कविता की प्रवृत्तियों – प्रथम संस्करण 1991, पृ.198
3) राजेश जोशी – समकालीनता और साहित्य – राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली – प्रथम संस्करण 2010, पृ. 35
4) केदारनाथ सिंह – रोटी
5) सूरजीत नवदीप – रावण का मरेगा नही – नवगीत से आगे, माध्यम अक्तूबर–दिसंबर–2006, पृ.101
6) रेखा कस्तवार– स्त्री चिंतन की चुनौतियों –राजकमल प्रकाशन इलाहबाद संस्करण–2013